पंजीयन संख्या/RNI No.:-TELHIN/2016/70799
ISSN : 2456-9445
खंड-4, अंक-1, पौष - फाल्गुन, 2076/ जनवरी - मार्च, 2020

समन्वय दक्षिण

दक्षिण भारत की साहित्य एवं संस्कृति केंद्रित पत्रिका

स्वातंत्र्योत्तर तेलुगु कविता में सामाजिक एवं सांस्कृतिक वैविध्य

डॉ.सी.कामेश्वरी

"मा तेलुगु तल्ली की मल्लेपूदण्ड, मा कन्न तल्ली की मंगालरुतुलु।
कडुपु लो बंगारु, कनुचूपु लो करुणा, चिरुनव्वुलो सिरुलु दोरलिंचु मा तल्ली।

सन् 1942 में श्री शंकरम् बंडी सुंदराचारी ने इस गीत की रचना की, जो तेलुगु प्रदेश का आधिकारिक गीत बन गया। टंगुटूरि प्रकाशम् पंतुलु की बेटी टंगुटूरि सूर्यकुमारी ने इसे स्वरबद्ध किया। इस गीत में भक्त तेलुगु भाषा को 'माता' की संज्ञा देते हुए उन्हें मोगरे का हार पहनाते हैं और उनकी आरती उतारते हुए कहते हैं कि उनके उदर में स्वर्ण, उनकी दृष्टि में करुणा की भावना मुख पर सदा स्मित हास्य बना रहता है।

"तेलुगु वीर लेवरा, दीक्षा बूनि सागरा
देश माता स्वेच्छा कोरि, तिरुगुबाटु चेयुरा।।"

"हे तेलुगु वीर!!, उठो, दृढ़ संकल्प लेकर आगे बढ़ो। भारत माता को स्वतंत्र करने के लिए संघर्ष करने का संकल्प लो।"

तेलुगु भाषा के साहित्य में स्वातंत्र्योत्तर साहित्य को 'नवसाहित्य' या 'अभ्युदय साहित्य' के नाम से जाना जाता है। साहित्यम्, सारस्वतम्, वाङ्मयम् शब्दों का प्रयोग तेलुगु साहित्य के लिए किया जाता है। 'साहित्य' शब्द के अर्थ का विश्लेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि "साहित्यभावः साहित्यम्" अथवा "हितेनसहितम् साहित्यम्" अर्थात् जो हितकारी हो, वह साहित्य है। संपूर्ण शास्त्रों के विषयों का समग्र रूप साहित्य है। काव्य, कथा, उपन्यास, नाटक आदि साहित्य कहलाते हैं। रस प्रधान भाषा की सहायता से जब हम सृजनात्मक अभिव्यक्ति करते हैं तो साहित्य का निर्माण होता है।

'साहित्यमे समाजमु, समाजमे साहित्यमु' अर्थात् साहित्य ही समाज है, समाज ही साहित्य है। समाज में जो संस्कृति समा जाती है तो उससे एक उत्तम साहित्य की रचना होती है।

'वेदनकु, दुःखमु कु स्पंदिंचिन वाडे कवि अवुताडु' अर्थात् जो वेदना, दुःख के प्रति संवेदनशील होता है, वही कवि हो सकता है। समाज में घटनेवाली हर एक घटना के प्रति कवि-मन प्रतिक्रिया करने लगता है। अपने भावों को शब्द प्रदान करते हुए वह साहित्य निर्माण में लग जाता है।

हमें, ईसा पूर्व 200 से तेलुगु साहित्य उपलब्ध होता है। यह लगभग 2220 वर्ष का साहित्य है। पहले जहाँ कवि अपने-अपने आश्रयदाताओं और आराध्य देवताओं का गुणगान करते हुए, भजन-कीर्तन करते दीखते थे, वहाँ स्वातंत्र्योत्तर साहित्य में इनके लिए समाज सर्वोपरि हो गया।

साहित्य के अनेक अंशों, विषयों, बिंदुओं को लेकर अथक प्रयास करने वाले कंदुकूरि वीरेशलिंगम् पंतुलु, वेटूरि प्रभाकरशास्त्री, चिलकूरि वीरभद्रावु, गुरजाड़ा श्रीराममूर्ति, दिवाकर्ल वेंकटावधानि, कवित्ववेदी कोरडा रामकृष्णय्या, खंडवल्लि लक्ष्मीराज्यम्, चागंटि शेषय्या, मल्लंपल्लि सोमशेखर शर्मा, सुरवरम् प्रताप रेड्डी, वंगूरि

सुब्बाराव, आरुद्र जैसे कवि आधुनिक युगीन साहित्य के सूत्रधार हैं, कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

तेलुगु साहित्य, तत्कालीन समाज में दिखाई देनेवाली अनेक समस्याओं से जूझता हुआ, पनपने लगा। दलित विमर्श, स्त्री विमर्श, निम्न कुल या कुलीन जाति की मजबूरियाँ, कुल में कन्या के जन्म को एक शाप की संज्ञा देना आदि अनेकानेक अंश, हमें तेलुगु साहित्य में देखने को मिलते हैं।

कंदुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलु, राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, विवेकानंद जैसे महानात्माओं ने हमारी संस्कृति में हो रहे बदलाव को बारीकी से देखा और अनिवार्य सुधार करने की आवश्यकता पर बल दिया। उनकी नई सोच, विचार ने हमारे सामने आधुनिक साहित्य या अभ्युदय साहित्य को लाकर खड़ा कर दिया। इसी शृंखला में 'युग प्रवर्तक' गुरजाड़ा अप्पाराव ने अपनी रचनाओं से सामाजिक क्रांति पैदा कर दी।

सन् 1910 से 1932 के बीच तेलुगु साहित्य में ऐसे कवि हुए जिन्होंने आत्मपरक सपनों को राष्ट्रीय आदर्श से ओतप्रोत करते हुए रेखाचित्रों का सृजन किया। सन् 1933 से 1949 में कुछ कवि ऐसे हुए जो, अभ्युदय समाज की वेदना और रुदन को उजागर करनेवाली रचनाएँ लिख रहे थे। सन् 1950 से 1972 के आसपास हमें रस और भाव की विविधता से पूर्ण साहित्य प्राप्त होता है। सन् 1972 से 1980 के करीब हमें विद्रोहात्मक कविताओं की वाहिका चलती सी दीख पड़ती है। सन् 1980 से ऐसे कवि हमारे सामने आए जो दलितों के हाहाकार को अपना श्वास-निःश्वास बनाकर अपनी भावनाओं को कविताओं के माध्यम से व्यक्त करते थे।

पी.वी.राजम् का कहना है कि अभ्युदय रचनाएँ समकालिक होने के साथ-साथ जीवन की विषम परिस्थितियों से होकर गुज़रने वाली रचनाएँ हैं। ये राजनीति से प्रभावित वातावरण में कुलबुलाने वाली रचनाएँ हैं। आर्थिक विपन्नताओं को चित्रित करती हुई, समाज के संघर्षों को व्यक्त करती हुई, नैतिक मूल्यों को उजागर करने वाली, इहलौकिक सिद्धांतों से प्रेरित होकर चलती हैं। यह वैज्ञानिक विशिष्टताओं से पूर्ण होकर परिस्थितियों को अनुकूल बनाते हुए चलने वाला साहित्य है।

अंधविश्वास और धार्मिक असमानताओं के मध्य कुलबुलाने वाले लोगों के लिए अभ्युदय साहित्य उनकी पीड़ा को उजागर करने वाला और उनके स्वर को मुखरित करने वाला साहित्य बनकर उभर आया।

कंदुकूरि वीरेशलिंगम्, गुरजाड़ा ने मानव अस्तित्व को मुख्य बताते हुए, मानवता को बढ़ावा देने को कहा। उनका यह मानना था कि तभी समाज में सुधार संभव हो सकता है। लोगों की निम्न जीवन रीति से संबंधित घटनाएँ, साहित्य में, कविता में, समाविष्ट होने लगीं। उनकी जीवन गाथाएँ, कहानियों के रूप में कही-सुनी जाने लगी।

कुछ समय बाद समाज में एक वर्ग ऐसा आया जो ज़मींदार और अमीर कहलाते थे, निम्न स्तर के लोग इनके पास पीढ़ी-दर-पीढ़ी गुलामी करते रह गए। गुलामी के शिकंजे से बचने के अथक प्रयास में वे मूक जीवन यापन करने लगे। उस पीड़ा को व्यक्त करने वाली अनेकानेक कविताएँ हमारे सामने आईं।

तत्पश्चात् धनिकों, अमीरों की विलासिता की कहानियाँ, काव्य रूप में हमारे सामने आईं। उनकी आधिकारिक आकांक्षाएँ, निम्न कुल के लोगों के जीवन-उद्देश्य और

समस्याओं पर पर्दा डालने लगीं। धीरे-धीरे एक समय ऐसा आया जब निम्न वर्ग के लोग विद्रोह करने लगे और अपनी आवाज़ को मुखरित करने लगे। श्रमिक वर्ग के उत्पन्न होने से उनकी समस्याएँ ध्वनित होने लगीं।

सन् 1935 में लंदन में 'भारत अभ्युदय लेखक संघ' का आयोजन किया गया। संघ ने अभ्युदय साहित्य की आवश्यकता एवं अनिवार्यता पर बल दिया और उन्होंने उन बिंदुओं को रेखांकित किया जिन पर विचार कर कवियों को काव्य रचना की प्रेरणा प्राप्त हो सकती थी। उन्होंने भारतीयों के जीवन में आ रहे नए परिवर्तनों को व्यक्त करने पर भी बल दिया। अभ्युदय कविता को नई दिशा में मोड़ने का कार्य भी उस समय के कवियों को सौंपा गया। इस कारण वे वास्तविक जीवन के धरातल पर उतर आए। आध्यात्मिकता से परे सोचने-विचारने को बाध्य हुए। आम जनता के दिल की धड़कन बनकर, जीवन की वास्तविकता को उजागर करने लगे। उनकी क्षमता को देखकर उन्हें मार्गदर्शक बनने पर भी ज़ोर दिया गया। उनकी परिस्थिति को उबारने के लिए राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक अंशों पर रोक लगाने की आवश्यकता पर भी ज़ोर दिया गया। भूखमरी, दरिद्रता, सामाजिक असमानता, राजनीतिक पराधीनता पर आधारित नई रचनाओं का सृजन होने लगा।

एक तरह से देखा जाए तो अभ्युदय साहित्य की नींव 'मार्क्सवाद' प्रतीत होता है। उससे प्रेरित होकर कवि अपनी वाणी को शब्द प्रदान करने में सफल रहे।

"कदिलेदी कदिलिंचेदी
मारेदी मार्पिंचेदी
पाडेदी पाडिंचेदी
मुनुमुंदुकु सागिंचेदी
पेनुनिद्दुर वदिलिंचेदी
परिपूर्णपु ब्रतुकिच्चेदी
कावालोय नवकवनानिकि।"

कवि श्री श्री कहते हैं कि-"यदि कोई काव्य हमें गति प्रदान कर सकता है, हमारे जीवन में बदलाव ला सकता है, प्रसन्नचित्त होकर गाना गवा सकता है, आगे ही आगे बढ़ने को प्रेरित कर सकता है, हमारी तंद्रा को भंग कर सकता है, हमारे जीवन को पूर्णता प्रदान करवा सकता है, तो वह मात्र अभ्युदय साहित्य ही हो सकता है।"

तेलुगु साहित्य के इतिहास में अभ्युदय युग को 'स्वर्णयुग' माना जाता है। आम जनता की समस्याओं और समाधान को लेकर चलने वाली कविता अभ्युदय कविता ही है, ऐसा माना जाने लगा। अभ्युदय साहित्य को भाव, भाषा, स्वरूप, वस्तु में परिवर्तन लाने वाला साहित्य माना जाने लगा। अभ्युदय साहित्य अनुभूति से पूर्ण काव्य है। न ही इसमें सौंदर्य में खो जाने की बात है और न ही किसी आदर्श को लेकर यह काव्य चलता है। यह कविता, मानव मूल्यों से पूर्ण, पवित्रता से भरपूर है।

कुछ समय पश्चात् राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों के प्रभाव से लोगों की मनःस्थिति में परिवर्तन होने लगे। पद, ओहदे, पैसे, वस्त्र, आभूषण, भौतिक सुख प्रदान करनेवाली वस्तुएँ मानव की कमज़ोरी बनने लगीं। उसके सामने यह चुनौती थी कि इन भौतिक सुखों का त्याग करते हुए उसे अपनी बुद्धि को एकाग्रता के साथ सक्रिय बनाना था और नव समाज का निर्माण करना था। मानव कल्याण के लिए उसे सतत प्रयासरत

रहना था और उसे यह समझने की आवश्यकता थी कि उसके लिए यही श्रेयस्कर है। उसे यह विश्वास दिलाने की आवश्यकता थी कि इनके पालन से वह समाज में आदर्शप्राय हो सकता है। व्यक्तिवाद, आदर्शवाद, सृजनात्मक कल्पना, व्यक्तिगत प्राकृतिक अवलोकन, अभ्युदय कविता के मुख्यांश थे।

19 वीं शताब्दी तेलुगु साहित्य में नए-नए आयामों का उषाकाल था। प्राचीन काल की सामाजिक परिस्थितियाँ कालांतर में अनेक बदलाव लेते हुए चलने लगीं और आधुनिक साहित्य के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत होती चली गई। 'रवि कांचनि चोट कवि कांचुनु' अर्थात् 'जहाँ न पहुँचे रवि, वहाँ पहुँचे कवि' उक्ति सत्य प्रतीत होने लगी। प्राचीन साहित्य की तुलना में अभ्युदय साहित्य में समाज, व्यापार, स्त्री की दशा में स्पष्ट परिवर्तन परिलक्षित होने लगे।

काव्य लिखना, कविता करना एक कला है। कवि केवल और केवल प्रेरणा मात्र से काव्य रचना नहीं करते हैं, प्रत्युत समाज को सचेत करने, मार्गदर्शन देने, पथभ्रष्ट को उचित राह पर लाने, वास्तविकता का परिचय देने, अराजकता, अन्याय, अधर्म के प्रति आवाज़ उठाने के लिए काव्य रचना करते हैं।

किसी भी काल का अध्ययन करने पर हमें यह ज्ञात होता है कि हर युग में कवि का स्थान अत्यंत पवित्र और उत्तम होता है। घर में जिस तरह माँ का स्थान अहम् होता है, वैसे ही समाज में कवि का स्थान अहम् होता है। अभ्युदय साहित्य के अध्ययन से यह भी ज्ञात होता है कि, गागर में सागर भरने की प्रवृत्ति कवि द्वारा ही संभव हो सकता है।

अभ्युदय साहित्य का सृजन करते हुए, लोगों को प्रेरित करने वाले उस समय के कवियों ने जिन्हें हम शीर्षस्थ कवियों की संज्ञा भी दे सकते हैं, ने अपनी निराली सोच और सृजनशीलता से, समाज के समक्ष अनोखे विषय लेकर काव्य रचना की और हमारे हृदयाकाश में गहरी पैठ लगाई। अपने विषय वैविध्य से कविताओं की नई शृंखलाएँ हमारे सामने घर करने लगीं। असीमित विषय-वस्तुओं से लोगों का झुकाव साहित्य के प्रति बढ़ने लगा और वे साहित्य के द्वारा समाज से जुड़ने लगे। सामाजिक समस्याओं से सरोकार होते हुए आम जनता के दिल में जगह बनाने लगे। हर काल में कवियों ने अपने कवि-कर्म का पालन किया है। वे केवल प्रेरणा पाकर काव्य रचना ही नहीं करते थे प्रत्युत समाज को सचेत करने, मार्गदर्शन देने, उचित राह पर लाने, वास्तविकता का परिचय देने, अराजकता, अन्याय, अधर्म के प्रति आवाज़ उठाने के लिए काव्य रचना करते थे।

तेलुगु अभ्युदय साहित्य में 'विशिष्ट कवि' के नाम से जाने जाने वाले, 'गब्बिलम्' के कवि गुर्रम् जाशुवा का नाम बड़े गर्व के साथ लिया जाता है। 'गब्बिलम्' काव्य को हम दलित काव्य की संज्ञा भी दे सकते हैं। निराले विषय के साथ इस काव्य ने पहली बार तेलुगु साहित्य में पदार्पण किया।

यह एक ऐसे क्षुधा ग्रस्त दलित की व्यथा कथा है, जो मुट्ठी भर अनाज के लिए पूरा दिन खेतों, खलिहानों में कमर तोड़ मेहनत करता है, परंतु दिन के अंत में खाने को जब कुछ नहीं मिलता है, तो चावल का माँड पी कर तृप्ति पाता है। यह अनुभूति प्रवण काव्य है, जिसमें कल्पना के साथ अपनी भावनाओं को ओतप्रोत कर कवि यथार्थ चित्रण द्वारा लोगों के दिल में अपनी अमिट छाप अंकित कर लेता है।

सन् 1895 में मिस्सम्मा तोटा, गुंटूरु-विनुकोंडा में जन्मे जाशुवा स्वयं एक दलित जाति में पैदा हुए थे, छुआछूत, वर्गभेद से पीड़ित होकर उन्होंने अपनी सारी वेदना

गब्बिलम् में उतारने की कोशिश की। 'गब्बिलम्' (चमगादड़) प्रतीक रूप में हमारे सामने आता है। गब्बिलम् एक कुरूप जीव है, जो किसी को भाता नहीं है, इससे एक प्रकार की दुर्गंध आती रहती है। समाज में कुलीन, दलित, अछूत, शूद्र वर्ग के लोगों से इनकी तुलना की गई है। दलितों की स्थिति भी बहुत कुछ गब्बिलम् की भाँति ही थी। उनको स्वतंत्र रूप से कहीं भी आने-जाने नहीं दिया जाता था। उच्च कुल के समाज से उन्हें परे रखा जाता था। दूसरी ओर गब्बिलम् पक्षी पर किसी भी व्यक्ति या समाज का कोई बस नहीं चल सकता था। कोई उसे सीमा में बांध नहीं सकता था। न कोई उसे रोक सकता था। वह अपनी इच्छा से कहीं भी उड़ान भर लेता है। अधिकतर यह मंदिरों में अपनी कर्कश आवाज़ के साथ प्रवेश कर लेता है और घंटों औंधे लटके रह जाता है। कवि अपनी वेदना भगवान तक पहुँचाना चाहते हैं, इसलिए गब्बिलम् को वे अपना संदेश वाहक बनाते हैं। अपनी इस भावनापूर्ण, मार्मिक रचना द्वारा जाशुवा ने हज़ारों पुरस्कार प्राप्त किए। उन्हें 'पद्मविभूषण' से विभूषित किया गया। केंद्र सरकार, साहित्य अकादमी की ओर से भी उन्हें अनेक पुरस्कारों से नवाज़ा गया।

"मरोप्रपंचम् मरोप्रपंचम् मरोप्रपंचम् पिलिचिंदोय।
पदंडी पोदाम, पदंडी पोदाम, पदंडी पोदाम पै पै की।"

"दूसरी दुनिया हमें पुकार रही है, चलो, आगे ही आगे बढ़ते चलो।"

'महाकवि' के नाम से जाने जाने वाले कवि श्री श्री, सिंह की भाँति गर्जन करते हैं। तेलुगु भाषा के वे कवि, अपनी ओजपूर्ण कविता 'महाप्रस्थानम्' के लिए जाने जाते हैं। श्री श्री, मानव मन को झकझोरने वाले सफल कवि हैं। ये भाव-कविता को प्रधानता देने वाले कवि थे। उनकी दृष्टि में भाव-कविता मानव मन को हिला देती है, बचैन कर देती है। इसी कारण कवि चहुँ ओर बिना रोक-टोक के विचरण करने में सक्षम हो जाते हैं। 'महाप्रस्थानम्' अर्थात् महा प्रस्थान। पीड़ित समाज से सम समाज की ओर प्रस्थान करना अर्थात् वह समाज जिसमें किसी प्रकार की ऊँच-नीच, अमीरी-गरीबी का भेदभाव न हो। उनका यह मानना था कि श्रमिक लोगों के जीवन में 'मेरा' कुछ भी नहीं है, जो भी है, सबका है। सभी को भाईचारे के साथ रहना चाहिए और एक दूसरे की सहायता करते रहना चाहिए।

तेलुगु काव्य-जगत में वर्ष 1965 में एक प्रकार की स्तब्धता आ गई थी। भाव-कविता अब एक काव्यांदोलन का रूप धारण करने लगी। स्वतंत्रता के 20 वर्षोपरांत कविता में कुल, वर्ग, धर्म, जाति, सिनेमा आदि प्रलोभनों में पड़कर युवा की कमज़ोरी व्यक्त होने लगी, जिसके कारण अनेक विश्लेषणात्मक रचनाएँ प्रकाश में आईं। सन् 1970 में श्री श्री के शंखनाद से युवक आगे ही आगे बढ़ते चले गए।

'कवि सम्राट विश्वनाथ सत्यनारायण' को हम हिंदी में 'सहस्रफन' के रचयिता के रूप में जानते हैं। जमींदारों के शोषण से त्रस्त कुलीनों का चित्रण करने में बड़े सक्षम थे। उनकी रचनाओं का एकमात्र लक्ष्य कुलीनों की दुर्दशा की जीती-जागती तस्वीर सभ्य पाठकों के सामने रखना था। उनका यह मानना था कि समाज की विभिन्न घटनाओं का सीधा संबंध मनुष्य के मन पर पड़ता है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियों के कारण सांप्रदायिकता से बद्ध होकर ये सचेत हो जाते हैं और साहित्य में इसका चित्रण करने में सक्षम हो जाते हैं। राष्ट्रीयता का भाव उनकी रचनाओं में विशेष रूप से दिखाई पड़ता है। वे उन भारतीयों को देख दुःखी होते हैं जो विदेश प्रस्थान कर रहे थे। अपने

देश, अपने लोग, अपनी संस्कृति से दूर जीवन यापन करने को इच्छुक हो रहे थे। हमारी संस्कृति की यह महानता रही है कि यह किसी को विस्मृत नहीं होने देती। चाहे बाह्याडंबर की चपेट में पड़कर वे कुछ समय के लिए पथभ्रष्ट हो जाते हैं, परंतु भारत और भारतीयता से समग्रतः अपना पल्ला नहीं झाड़ सकते हैं।

कंदुकूरि वीरेशलिंगम् पंतुलु में निहित सामाजिक विद्रोह की भावना एवं गिडुगु राममूर्ति के भाषा विद्रोह को आत्मसात करते हुए, साहित्य की नई रीति का सजृन करने वाले कवि गुरजाड़ा हैं। सामाजिक विकास के स्तर पर सन् 1897 में रचित 'कन्याशुल्कम्' के रचयिता अपनी विशिष्ट कविताओं के लिए हमेशा स्मरणीय रहेंगे। कुल से अधिक गुण की श्रेष्ठता को महत्व देने वाले कवि गुरजाड़ा हैं। आधिकारित और राजसी ठाठ-बाट में निहित निम्नता के प्रति वे पाठकों का ध्यान आकृष्ट करना चाहते थे। समाज में स्त्री की दुर्दशा, दुःस्थिति का चित्रण उनकी रचनाओं का अभिन्न अंग हुए हैं। 'कन्याशुल्कम्' के द्वारा वे बाल-विवाह, विधवा-विवाह का विरोध करते दीखते हैं। स्त्री स्वतंत्रता, शिक्षा की आवश्कता पर भी वे बल देते हैं। समाज को सचेत करना वे अपना कर्तव्य समझते थे। सामाजिक क्षेत्र के अनेक अंतरद्वंद्व, मार्मिक भावनाओं से पूर्ण अनेक बिंदु, साहित्य में जगह बनाने लगीं। गुरजाड़ा नव कविता के 'ध्रुव तारा' हैं। ये अक्षरों के द्रष्टा और सृष्टा कहलाते हैं। एक बात ध्यान देने योग्य है कि इनके द्वारा रचित 'कन्याशुल्कम्' का अनुवाद अंग्रेज़ी, तमिल, कन्नड़, रूसी भाषाओं में हुआ है। 'पुत्तडिबोम्मा पूर्णम्मा' काव्य के आधार पर वे मजबूर, विवश, बेबस स्त्री की दशा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि जब वह किसी दबाव में आ जाती है तो सहारा प्राप्त करने के लिए यत्र-तत्र नहीं देखती है, परंतु न मिलने पर अपने प्राण त्यागने के लिए भी तैयार हो जाती है।

पूर्णम्मा के स्वर में कवि कहते हैं-

"नलुगुरु कूचुनि नव्वे वेलल
ना पेरोक तरि तलवंडी;
मी मी कन्नबिड्डल नोकतेको
प्रेमनु न पेरिवंडी।"

"जब घर के सभी सदस्य आनंदपूर्ण होकर, बैठकर बात कर रहे हों, मुझे भी एक बार याद कर लेना। अपनी एक बेटी को मेरा नाम दे देना।"

देशभक्ति को उजागर करनेवाली उनकी कुछ कविताएँ हैं, जो समाज को झकझोर देती हैं।

"देशमुन प्रेमिंचुमन्ना
मंची अन्नदि पेंचुमन्ना
वुट्टि माटलु कट्टि पेट्टवोय
गट्टि मेल तलपेट्टवोय।"

अर्थात् व्यर्थ की बातों को त्यागकर मनुष्य को देश के लिए महान कार्य करना चाहिए।

तेलुगु भाषा-भाषियों के सामाजिक स्तर को ऊपर उठाने के लिए सतत प्रयासरत रहने वाले कवि वीरेशलिंगम पंतुलु हैं। इनको 'आधुनिक साहित्य निर्माता' भी कहा जाता है। इन्होंने अनेक नाटक, कहानियाँ, काव्यों की रचना की। आधुनिक कविता की शुरुआत करनेवाले कवि हैं। इनकी रचनाएँ समाज में होनेवाली विकृत घटनाओं, घर कर रहे

सांप्रदायिक दुराचारों, अंधविश्वासों का विरोध करती हुई जान पड़ती हैं। स्त्री-शिक्षा, स्त्री सशक्तीकरण, दहेज प्रथा विरोध, इनकी रचनाओं की विशेषता थी। इन्होंने जाति-भेद, वर्ग-भेद की कड़ी निंदा की है। समाज में फैले अंधविश्वासों के प्रति आवाज़ उठाई। इसी कारण इन्हें अभ्युदयवादी, समाज-सुधारक, स्त्री-उद्धारक, गद्य तिकन्ना, राजा राममोहन राय ऑफ आंध्र (Raja Ram Mohan Roy of Andhra) संज्ञाओं से पूर्ण किया गया।

तेलुगु भाषा के स्वातंत्र्योत्तर साहित्य को नवसाहित्य या अभ्युदय साहित्य के नाम से जाना जाता है। धर्माचरण, वर्गभेद, सामाजिक असमानताओं, स्त्री सशक्तीकरण, प्रकृति-सौंदर्य, नारी-सौंदर्य, नखशिख वर्णन, किसानों की दुर्दशा, बौंसुरी, तितली, अनुभूति प्रवण काव्य, निम्न जाति की वेदना, उनका हाहाकार, अछूतोद्धार आदि विषय साहित्य में अपनी विशिष्ट जगह बनाने लगीं।

'नव पद्य के आधार' तिरुपति वेंकटकवुलु, 'भाव कवि' देवुलपल्लि कृष्ण शास्त्री, 'कवि राजु' त्रिपुरनेनी रामस्वामी, 'विनुत्न कवि' नंडुरि वेंकट सुब्बाराव, 'कर्षक कवि' दुव्वुरि रामिरेड्डी, 'सरस्वती पुत्र' पुट्टपर्ति नारायणाचार्युलु, 'मा नव' (हमारे नवीन) कवि बाल गंगाधर तिलक, 'चैतन्य सारथी' दाशरथी, 'निरंतर कवि' नारायण रेड्डी, 'कविता शिल्पी' शेषेंद्र, ऐसे ही पता नहीं कितने कवियों ने तेलुगु साहित्येतिहास में अपनी रचनाओं से चार चाँद लगाए। इन रचनाकारों ने साहित्य को बढ़ावा देने के साथ-साथ सामाजिक स्तर पर अनेक परिवर्तन करते हुए तेलुगु साहित्य के इतिहास में अपना नाम अंकित किया। इनकी रचनाओं की अपनी विशिष्टता है और ये रचनाएँ एक से बढ़कर एक हमारी स्मृति में रहने लायक हैं। स्वातंत्र्योपरांत अराजकता की स्थिति में जब नवयुवक मानसिक रूप से जोश से पूर्ण होकर, उन्मत्त हो चले थे, मदमस्त होकर जीवन-पथ से हटने लगे थे, नैतिक मूल्यों को भुलाकर अनाचारी हो रहे थे, उस अवस्था में आधुनिक साहित्य ने साँस ली। अभ्युदय कविता, नई कविता पाठकों के सामने खुली किताब की भाँति थी, जो समाज में घटनेवाली हर एक घटना का जीता जागता चित्र साहित्य में अंकित कर रही थी। लोगों की निकटता को प्राप्त करने की क्षमता अभ्युदय साहित्य को प्राप्त हुआ। तेलुगु साहित्य के इतिहास में अभ्युदय साहित्य एक सफल पृष्ठ के रूप में हम पाठकों के सामने उजागर हुआ है। इसके बिना तेलुगु साहित्य अधूरा रहेगा।

किसी कवि का यह कहना था कि "मसलकर फेंके हुए कागज़ को संजोकर रखो, उसमें जीवनोपयोगी तत्व हो सकते हैं।" कवि का यह भी मानना था कि "इसमें मात्र शब्द नहीं ये नित्यप्रति जीवन के नए आयाम लेकर आते हैं। उनसे प्राप्त होनेवाली अनुभूतियाँ हमें नूतन तत्व प्रदान करती हैं।"

"परुल बाधा तन बाधग
पंचुकोन्नवाडे
परुल सुखमुलो शिरस्सु
पैकेत्तिनवाडे कवि।" (सी.नारायण रेड्डी)

अर्थात कवि दूसरों के दुःख को अपना दुःख मानने वाला, दूसरों के सुख में अपने मस्तक को ऊँचा करके चलने वाला होता है।

उस समय के कवि यह मानते थे कि "यदि कोई कवि, अपनी कविता से पाठकों को प्रभावित नहीं कर पाया, तो निश्चय ही वह कविता, कविता की श्रेणी में नहीं आ सकती, वह कविता नहीं हो सकती।"

कृष्णदेवराय के शब्दों में-"देश भाषलंदु तेलुगु लेस्सा।" (देशीय भाषाओं में तेलुगु श्रेष्ठ है।) 2220 वर्ष प्राचीन इस तेलुगु भाषा का साहित्य अपने आप में निराला है और भारतीय इतिहास में अपनी एक अलग पहचान रखता है। अनोखे विषय-वस्तुओं के साथ आज यह भाषा 'इटालियन ऑफ द ईस्ट' (Italian of the East) की संज्ञा प्राप्त कर विश्व साहित्य में अपना अद्‌वितीय स्थान रखती है। ○

संदर्भ सूची :

1. डॉ.द्‌वारका नाथ शास्त्री, तेलुगु साहित्य चरित्र
2. तेलुगु लेखक, यू ट्‌यूब